RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-1
Issue-2
February-2016

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com

मध्यकालीन संगीत ग्रन्थ : तालों के परिप्रेक्ष्य में

डॉ0 नंन्दिनी मुखर्जी

एसोसिएट प्रोफेसर संगीत वादन (तबला) जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज प्रयागराज

अति प्राचीन काल का ताल केवल निश्चित गति का चित्रण मात्र था। क्रमशः ताल वाद्यों की विविधता तथा सम विषम ताल प्रकारों का विकास मानव रूचि का परिचायक है। इसी लोक रूचि के कारण तालों को वर्तमान स्वरूप प्राप्त हुआ है।

मध्यकाल के प्रारम्भ में उत्तरी तथा दक्षिणी संगीत पद्धतियाँ पृथक होने लगी थी। 1300 ई0 तक मुसलमानों का सुदृढ़ साम्राज्य भारत में स्थापित हो गया। फारसी सभ्यता कला एवं संगीत का प्रभाव उत्तरी भारत के संगीत पर पड़ा। मध्य काल से पूर्व तक ग्राम राग और जातियाँ प्रचलित थी। पर मध्य काल में राग गायन का प्रचलन हो गया। ध्रुपद और ख्याल भी प्रचलित हुए। मुस्लिम शासकों ने भारतीय संस्कृति के ग्रन्थों को नष्ट कर दिया तथा बड़े–बड़े भारतीय विद्वानों को प्रलोभन देकर ऐसे ग्रन्थों की रचना करवाई जिसमें मुस्लिम संस्कृति और सभ्यता की प्रशंसा वर्णित थी। भारतीय संगीत की पवित्रता व उसका प्राचीन स्वरूप लगभग नष्ट हो गया। मुस्लिम काल भारतीय संगीत के लिये अभिशाप बन गया।

अलाउद्दीन खिलजी के दरबार में अमीर खुसरो ने श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया। अलाउद्दीन संगीत का बड़ा प्रेमी था उसने इन्हें अपना राज गायक बना लिया। वे फारसी संगीत के अभिजात गायक, कवि और राजनीतिज्ञ थे उन्होंने फारसी संगीत के साथ हिन्दुस्तानी संगीत का मिश्रण किया। उन्होंने भारतीय रागों को राग रागिनी पद्धति अथवा ग्राम मूर्च्छना पद्धति के स्थान पर मुकाम पद्धति में वर्गीकृत किया। उन्होंने कौल और तराना का आविष्कार किया कौल गाने वाले कव्वाल कहलाये। वे बहुत अच्छे संगीतज्ञ व गीतकार थे। उन्होंने भारतीय संगीत व ईरानी संगीत को मिलाकर अनेक राग–रागनियों का आविष्कार किया। उन्होंने फारसी बाहरों और वजनी को सामने रखकर जिन 17 तालों को प्रचलित किया वे इस प्रकार हैं– पश्तो, झूमरा, जूबहर, झपताल, कव्वाली, खम्सा, सोल, फरदोस्त फाख्ता, पहलवान, कैद, होरी, दास्तान, सवारी, पचक, जला, तिताला, पटताल, आड़ा चौताल। उन्होंने तबले और ढोलक जैसे वाद्य यन्त्रों का भी आविष्कार किया।

मध्यकाल में संगीत लोक रूचि के अनुसार तथा परिस्थिति के अनुसार दो अलग–अलग धाराओं में विकसित होता रहा। एक मन्दिर या मठों के आश्रय के माध्यम से दूसरा राजाश्रय के माध्यम से। इस प्रकार मध्यकाल के जितने भी ग्रन्थकार या संगीतकार हुए हैं वे मन्दिरों, मठों की संत परम्परा से अथवा राजे–महाराजाओं के आश्रय से सम्बन्धित रहे हैं। मन्दिरों, मठों में जिस प्रकार का संगीत रहा उसके अनुसार वहाँ कम मात्रे वाले तालों का विकास हुआ तथा राजाश्रय में पनपे संगीत में राजा महाराजाओं के रूचि के अनुसार गीत प्रकारों में प्रयुक्त तालों का अधिक विकास हुआ।

संगीत ग्रन्थों में स्वरों व तालों का प्रयोग क्लिष्टा के साथ विकसित बुद्धि सम्पन्न कलाकारों द्वारा किया गया है। डा0 अरूण कुमार सेन ने भी इस बात की पुष्टि की है– ''शास्त्रीय या उच्चांग संगीत से तात्पर्य संगीत की उन कलात्मक अभिव्यक्तियों से है जिनका विकास बौद्धिक आधार पर प्राचीन काल से आज तक हुआ है। विकसित बुद्धि सम्पन्न कलाकारों ने अपनी रचनाओं में स्वरों की क्लिष्टता के साथ ही तालों की जटिलता के भी जो प्रयोग किये हैं उनके प्रमाण प्राचीन शास्त्र ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। नाट्यशास्त्र आदिभरत, दत्तिलम भरतार्णव, संगीत रत्नाकर ताल समुद्र एवं कई अप्राप्य एवं अपूर्ण दक्षिण व उत्तर भारतीय ग्रन्थों में इसने प्रमाण उपलब्ध है। कला की असाधारण अभिव्यक्ति, बौद्धिक आधार पर सम्भव होती है एवं प्राचीन कलाकारों की प्रतिस्पर्धा के फल स्वरूप उच्चांग भारतीय संगीत के उन रचनाओं के भी निर्माण हुए जिन्हें अधिक मात्रा सम्पन्न तालों में गाया जा सके ऐसी रचनाऐं, विद्वानों के ज्ञान की कसौटी समझी गई एवं जिस प्रकार साहित्य की रीति कालीन परम्परा में रस, छन्द एवं अलंकारों का आधिक्य हुआ उसी प्रकार संगीत में भी स्वरात्मक व तालात्मक जटिलता से प्रयोग हुए। तालों के सार्थक प्रयोग प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध हैं।''[1]

मध्यकाल में संगीत के अनेक छोटे–बड़े ग्रन्थों की रचना हुई। इस लेख में कुछ प्रमुख का ही उल्लेख किया गया है। तेरहवीं शताब्दी में उपलब्ध प्राचीन ग्रन्थों में शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर की गणना सर्वोत्तम ग्रन्थों मे की जाती है। ''संस्कृत में इनका विशाल संगीत ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हो सकता। इस ग्रन्थ में संगीत सम्बन्धी सभी विषयों का सांगोपांग वर्णन किया गया है। इसे भारतीय प्राचीन संगीत का एक प्रमाणिक ग्रन्थ मानते हैं।''[2]

संगीत ग्रन्थ सार में वर्णन है कि इस ग्रन्थ को सन् 1942 ई0 में आनन्द आश्रम संस्कृत ग्रन्थावली के 35वें ग्रन्थों के रूप में प्रकाशित किया गया। इस ग्रन्थ में सात अध्याय है अतः इसे सप्त अध्यायी भी कहा जाता है। इसके पंचम अध्याय

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

ताल अध्याय है। यह अध्याय 124 पृष्ठों में है। इसमें मार्ग, ताल, मात्रा, कला, लघु, गुरू, प्लुत चंचत्पुटः, चाचपुटः, षटपितापुत्रक, पात, और कला, देशीताल, क्रिया, यति–गृह, धातु, मातु, सशब्द और निःशब्द क्रिया एक सौ बीस तालों के नाम तथा रूप और प्रकार का वर्णन है।''[3]

भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन में संगीत रत्नाकर के पंचम अध्याय जो कि तालाध्याय हैं उसके विषय में कहा गया है कि उसमें ''तत्कालीन व तत्पूर्व तालों का विशद विवेचन हुआ है। ताल शब्द की व्युत्पत्ति के बाद दशप्राणों का विस्तृत एवं बोध गम्य विवेचन किया गया है। पंच लघु अक्षरों के उच्चारण काल की मात्रा निरूपित करते हुए उन्होंने चतुस्त्र तथा त्र्यस्त्र तालों से दो मत प्रतिपादित किया है एवं चंच्चपुट व चाचपुट को इन दोनों जातियाँ का मूल ताल मानते हुए उनके यथाक्षर द्विकल व चतुष्कल स्वरूपों को चिन्हों द्वारा समझाया है।''[4]

डॉ0 सुभद्रा चौधरी ने 'भारतीय संगीत में ताल और रूप–विधान' में वर्णन किया है कि ''संगीत रत्नाकर के बाद ऐसे अनेक ग्रन्थ हैं, जिनमें तालों का निरूपण किया गया है। ये ग्रन्थ दो वर्गों में रखे जा सकते हैं–

1. वे ग्रन्थ जिनसे सम्भवतः संगीत के सभी पक्षों का शास्त्रीय निरूपण है और एक अंग के रूप में ताल का भी लिखा गया है।
2. केवल ताल सम्बन्धी ग्रन्थ।

पहले वर्ग के ग्रन्थों के नाम इस प्रकार हैं– संगीत समयसार, संगीतोपनिषत्सारोद्धार संगीत सुधाकर, आनन्द संजीवनम्, संगीत–दामोदर, रस कौमुदी, संगीत दर्पण, संगीत मकरन्द, संगीत सारामृत आदि। दूसरे वर्ग में उनका उल्लेख किया जा सकता है जिनके नामों से ऐसा लगता है कि वे केवल ताल से ही सम्बन्धित हैं जैसे तालललक्षणम्, तालदश प्राणकरणम्, ताल चन्द्रिका, ताल दीपिका, ताल लखणम् आदि। इसके अतिरिक्त एक ग्रन्थ और हैं जो संगीत का न होकर स्थापत्यशास्त्र का ग्रन्थ है लेकिन उसमें प्रसंग वश संगीत पर भी लिखा गया है। इसके ताल से सम्बन्धित लगभग 41 श्लोक हैं। ये ग्रन्थ 'अपराजितपृच्छा', अथवा 'सूत्रसन्तानगुणकीर्ति प्रकाश अथवा 'सूत्रसन्तान'।''[5]

सुधाकलश द्वारा रचित ' संगीतोपनिषत्सारोद्धार भी एक विशाल ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ के केवल छः अध्याय ही उपलब्ध है। इसके प्रथम अध्याय में तालों का साधारण उल्लेख तथा द्वितीय अध्याय में विभिन्न मात्रा खण्डों द्वारा तालों का विशद विवेचन हुआ है। उन्होंने ताल को परिभाषित करते हुए लघु, गुरू, प्लुट की संख्या 3 प्रकार के ग्रह सम, अतीत और अनागत ग्रह के सन्दर्भ को परिभाषित किया है। सुधा कलश ने 3 प्रकार के ताल तालों के लक्षण, मात्रा, नाम पाटाक्षर और लघु, गुरू आदि का विवरण दिया है।

15वीं शताब्दी का ग्रन्थ संगीत 'दामोदर शुभंकर' कृत है उन्होंने 101 तालों में से मुख्य 60 तालों के स्वरूप व लक्षण लिखे हैं। अन्त में ताल प्रस्तार एवं प्लुतादि मात्राओं के भेद से ताल घात की प्रक्रिया का भी निर्देश दिया है। महाराजा सवाई प्रताप सिंह देवकृत संगीत सार भारतीय संगीत में एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इन्होंने ताल को माया रूप माना है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्राप्ति हेतु ताल का महत्व निरूपित किया है। राजा तुलजा कृत संगीत सारामृत 18वीं शताब्दी का ग्रन्थ है। इसमें कुछ बातों को छोड़कर संगीत रत्नाकर की ही पुनरावृत्ति की गई है।

प्राचीन परम्परा के ग्रन्थों में तालों के मुख्यतः दो भेद थे। पहला मार्ग ताल दूसरा देशी ताल। मध्य युग में तालों के स्वरूप में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। संगीत समयसार ही पहला ग्रंथ है जिसमें प्राचीन संगीत की इकाइयों का परिवर्तित स्वरूप दिखता है। तालों में स्वरूप के साथ–साथ उनके पाटाक्षर सर्वप्रथम 14वीं शताब्दी के ग्रन्थ 'संगीतोपनिषत्सारोद्धार' में प्राप्त होता है। इसके पूर्व किसी भी ग्रन्थ में तालों के पाटाक्षर नहीं दिये गये हैं। पाटाक्षर अवनद्ध वाद्यों के हैं इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि तालों का प्रयोग 14वीं शताब्दी से घनवाद्यों की अपेक्षा अवनद्ध वाद्यों द्वारा पूरा किया जाने लगा होगा। इन पाटाक्षर को आज के ठेके का पूर्व रूप कह सकते हैं। परन्तु उस समय में बोलों और आज के बोलों में काफी अन्तर है।

इस प्रकार मध्य युग में संगीत में कई परिवर्तन हुआ। नई शैलियों का उद्भव हुआ। ताल के मूल सिद्धान्त और मूल स्वरूप आज भी प्राचीन पद्धति से संबद्ध है किन्तु उसके आकार में परिवर्तन हुआ है। कुछ प्राचीन संगीत की धारणाएं एकदम समाप्त हो गई है और कुछ में काफी परिवर्तन हो गया। देशी और मार्गी ताल एक में मिल गये और उनकी संख्या में भी अन्तर हो गया। इसलिये मध्य युग को संगीत के लिये परिवर्तन का युग कहा जाता है।

सन्दर्भ सूची–

1. भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृ0सं0 78
2. सेन अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन मध्य प्रदेश संगीत ग्रन्थ अकादमी, पृ0सं0 324
3. शर्मा, भगवत शरण– संगीत ग्रन्थ सार सखी प्रकाशन– गोतावाला, कोठी, हाथरस, पृ0सं0 116
4. सेन अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन मध्य प्रदेश संगीत ग्रन्थ अकादमी, पृ0सं0 326

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

5. चौधरी डॉ0 सुभद्रा– भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर, पृ0सं0 97

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. सेन अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, मध्य प्रदेश संगीत ग्रन्थ अकादमी, 1989
2. शर्मा, भगवत शरण– संगीत ग्रन्थ सार सखी प्रकाशन– गोतावाला, कोठी, हाथरस, 1988
3. चौधरी डॉ0 सुभद्रा– भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर, 1984
4. शर्मा प्रो0 स्वतन्त्र– भारतीय संगीत : एक ऐतिहासिक विश्लेषण– अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद, 2014
5. शर्मा भागवत शरण– भारतीय संगीत का इतिहास संगीत कार्यालय हाथरस।
6. बसन्त– संगीत विशारद संगीत कार्यालय हाथरस, 2004

© RRIJM 2015, All Rights Reserved